आखर हिंदी पत्रिका ; e-ISSN-2583-0597 खंड 3/अंक 4/सितंबर 2023
Received: 18/07/2023; Accepted: 14/09/2023; Published: 24/09/2023

हिन्दी कथा साहित्य में उत्तराखण्ड की लोक संस्कृति

- **प्रकाश चन्द्र उनियाल**
9448128482
prakash25670@gmail.com

प्रकाश चन्द्र उनियाल, **हिन्दी कथा साहित्य में उत्तराखण्ड की लोक संस्कृति**, आखर हिंदी पत्रिका, खंड 3/अंक 4/सितंबर 2023,(393-397)

सम्पूर्ण भारत कि विधाताओं से भरा है, भारत ऐसा देश है जहाँ कहा जाता है कि देवता भी मानव रूप में जन्म लेने को लालायित रहते है, जहाँ हर प्रकार का मौसम मिलता है जहाँ समुद्र भी है और नदियाँ जहाँ ऊपर है और जिसका मस्तक हिमालय है, विश्व में शायद ही और कोई देश होगा जहाँ इस प्रकार की विविधतायें मिलती हो, और जब जहाँ विविधतायें होती है तो यह अवश्यम्भावी है कि वहाँ के रहने वाले लोगो में भी विविधतायें मिलती होंगी, समुद्र के किनारे रहने वालो की संस्कृति अलग है, नदियों के किनारे रहने वाले लोगो की अलग इसी प्रकार पठार में अलग और पहाड़ी अंचल के क्षेत्र में भी विविधतायें होना स्वाभाविक है।

उत्तराखण्ड एक पहाड़ी राज्य है जिसकी संस्कृति भी अन्य क्षेत्रो से अलग व भिन्न है जहाँ का रहन-सहन, खान-पान, तीज-त्योहर आदि अलग-अलग है, पूर्व में उत्तर- प्रदेश का भाग होते हुए भी आज का उत्तराखण्ड अपनी भौगोलिक स्थिति के लिए विख्यात था।

भारत 1947 में आजाद हुआ और वर्तमान उत्तराखण्ड उस समय के अविभाज्य उत्तर प्रदेश का अंग था, लेकिंन आजादी के बाद से ही इस भू-भाग को अलग करने की माँग उठती रही और दबती रही लेकिंन संघर्ष जारी रहा, 90 के दशक में पुन: अलग राज्य का आन्दोलन चला और उसका परिणाम 2001 में 9 नवम्बर को एक अलग प्रदेश के रूप में उत्तराँचल /उत्तराखण्ड का जन्म हुआ, और तब से लेकर आज तक उत्तराखण्ड अपनी विविधता संस्कृति के द्वारा भारत ही नही सम्पूर्ण विश्व पटल पर छा गया है।

उत्तराखण्ड की लोक संस्कृति की अपनी अलग पहचान है जहाँ पर शैव और वैष्णव संम्प्रदाय के लोग अधिक रहते है और विश्व की धरोहर गंगा का उद्रगम भी उत्तराखण्ड में ही स्थिति है, यहाँ की लोक संस्कृति अपनी अलग पहचान रखती है जो हमें वहाँ भ्रमण पर दिखाई देती है।

सन 2001 दिनांक 9 नवम्बर को 27 वे राज्य के रूप में उत्तराखण्ड/ उत्तराँचल के रूप में सामने आया उत्तराखण्ड जो एक पहाड़ी राज्य है जिसकी भौगोलिक स्थिति भारत के अन्य भागों से भिन्न है, उत्तराखण्ड जिसका 90% भूंभाग वनाच्छादित है और जिसकी चर्चा हिमालय राज्य के रूप में होती रही है, जिसको देव भूमि और साधना की भूमि भी कहाँ जाता है, हरिद्वार से लेकर गंगोत्री तक और काली के किनारे से लेकर कैलाश तक फैला हुआ भू भाग है जिसकी सभ्यता महाभारत काल से जुडी हुयी है, और अगर उसके पूर्व की बात की जायें तो हिन्दू मान्यता के अनुसार उत्तराखण्ड को शिव और पार्वती की भूमि कहा जाता है, पार्वती का मायका हिमालय है और पार्वती के पति देव देवो के देव महादेव शिव जिनकी भूमि हिमालय है।

उत्तराखण्ड को पूर्व में देव भूमि, ऋषी भूमि कहा गया है जहाँ देवता और महादेव को प्रसन्न करने के लिए मानव हमेशा से तप करते रहे है उत्तराखण्ड की भूमि भगीरथ की भूमि है जिन्होंने अपनी तपस्या के द्वारा जीवन दायिनी गंगा को धरती पर उतारा वह भूमि उत्तराखण्ड है।

उत्तराखण्ड का लोक जीवन :-

उत्तराखण्ड का लोक जीवन भारत के अन्य क्षेत्रो से भिन्न है, जहाँ की बोल-चाल, पहनावा, खान-पान अन्य क्षेत्रो से भिन्न है, आजादी के अनेक वर्षो तक भी यहाँ का सम्पर्क अन्य क्षेत्रो से कटा-कटा सा था, क्योंकि यहाँ सड़क ना के बराबर थी और आवागमन के साधन पैदल या घोडा, खच्चरों के द्वारा ही होता था इसलिए उत्तराखण्ड का लोक जीवन आज भी अनेक लोगो को अलग लगता है, आज स्थिति थोड़ी बदली है क्योंकि आज काफी क्षेत्रो में सड़को को देखा जा सकता है और आज के आधुनिक युग जिसे हम संचार क्रान्ति युग भी कहते है जिसमें मोबाइल की भूमिका काफी बड़ी है, उत्तराखण्ड भी इससे अछूता नही है, और इस परिवर्तन को उत्तराखण्ड में देखा जा सकता है।

बाह्य सम्पर्क से विच्छिन्न उत्तराखण्ड के लोक-जीवन की इस स्थिरता एवं अपरिवर्तनीयता का कारण मुख्यत: यह रहा कि यहाँ के पर्वतीय क्षेत्रों के लोगों के जीवन तथा समस्त क्रिया कलापो का मूलाधार रहा है - कृषि और पशुचारण, इनके सारे वैयतिक्त, समाजिक एवं संस्कृतिक क्रिया कलाप इसी धुरी के इर्द-गिर्द घूमते रहे है, उसकी जीवन पद्धति सम्पूर्ण रूप से इन्ही दो आधारों से संचालित होती रही है, क्योंकि इनके इन आधारों में पुरातन काल से कोई परिवर्तन नही आया, अत: उनकी जीवन पद्धति का चक्र भी यथावत घूमता रहा, यहाँ की 99% जनता का रहन-सहन, खान-पान सब इन्ही दो मुलाधरो पर चला करता था जीवन की

सारी आवश्यकताएं इन्ही दो स्रोतों से पूरी की जाती थी, किसी चीज के लिए बाह्य जगत पर निर्भर नही रहना पड़ता था ।

केवल नमक ही एक ऐसी वस्तु थी जिसके लिए अन्य लोगों पर निर्भर होना पड़ता था और इसकी आपूर्ति भी कर देते थे "यहाँ के भोटान्तिक व्यवसायी, अन्यथा लत्ता-कपड़ा, भांडे-वर्तन, गुड-तेल सभी कुछ स्थानीय सोतों से उपलब्ध हो जाया करता था, लत्ता-कपडे, के लिए लोग भेड़ बकरियों से प्राप्त ऊन को खेतों में आयी गयी कपास की रुई को अथवा भांग के रेशों को कातकर स्थानीय बुनकरों (कोलियों) से उसे बुनवा लिया करते थे, जो अपने रांचो (खड़िडयों) में दो बिन्ता चौड़ा कपड़ा बुन लिया करते थे, लोग उन्हें जोड़कर अपेक्षित रूप में काटकर हाथ से कपड़े सिल लिया करते थे, कुछ क्षेत्रों में 'रिवबु' (गन्ना) भी आया जाता था जिसे कोल्हू में पेर कर तथा लोहो के टाहों में उबालकर गुड-शक़्क़र बना लिया जाता था, वैसे मीठे का काम अधिकतर शहद से ही चल जाता था"।

इस प्रकार हम कह सकते है कि उत्तराखण्ड का लोक जीवन स्वावलम्बी और आत्म निर्भर था अपनी आवश्यकतानुसार सामग्री का उत्पादन वह स्वंय कर लेता था या आपस में आदान प्रदान कर या वस्तु विनिमय के द्वारा पूरा कर लिया करता था, इसलिए उत्तराखण्ड का जनमानस आज भी अपनी माटी से अत्यधिक प्रेम करता है आज भले ही रोजगार के लिए उसे महानगरो की ओर पलायन करना पड़ा है लेकिन उसका आज भी लगाव घर आँगन उत्तराखण्ड ही है क्योंकि वह अपनी लोक संस्कृति से अत्यधिक स्नेह करता है जो उसके रग रग में बसी है।

संस्कृति की परिभाषा : उत्तराखण्ड की लोक संस्कृति के बारे में जानने से पूर्व संस्कृति क्या है और इसकी परिभाषा क्या है इस विषय में जानना उचित रहेगा, जैसा कि सर्व विदित है संसार में अनेको संस्कृति है और हम उन्हें भिन्न नामो से जानते है, संस्कृति शब्द अपने आप में एक व्यापक शब्द है औब अनैक विद्दानो के इस बारे में अपने अलग-अलग मत है।

एक तो संस्कृति का रूप इतना व्यापक तथा बहुआयामी होता है कि उन सभी को किसी शब्दावली में परिसीमित कर पाना कठिन है और दूसरे इसके विवेच्य विषयों के बारे में मानव विज्ञानियों, समाजशास्त्रियों, धर्मशास्त्रियों तथा मानविकी से सम्बद्ध अन्य प्रकार के विद्धानों में मतैक्य भी नहीं है, किसी के मत में तो अंधविश्वासों से लेकर कर्म-काण्डीय अनुष्ठानों तक वह सब कुछ उस समाज विशेष की संस्कृति का अंग है जो कि उसका अनुपालन करता है तथा जिसका व्यक्तिकरण उससे सदस्यों के आचार विचारों, रीति-रिवाजों, तीज-व्यौहारों, विविध-रूपों में अनुष्ठित किये जाने वाले अनुष्ठानों एवं धार्मिक परम्पराओं, व्यक्तिगीत, कला-साहित्य आदि के माध्यम से व्यक्त हुआ करता है, किन्तु इस परिभाषा से असहमति रखनेवाले कतिपय अन्य विद्धान हैं जो कि उन अंधविश्वासों, लोकचारों एवं समाजिक परम्पराओं को संस्कृति की परिधि में नहीं रखते हैं।

जो मानते हैं कि मानव के संस्कृत (cultured) अथवा परिस्कृत (Civilized) जीवन के परिचायक नहीं होते है, अत: कहा जा सकता है कि 'संस्कृतितत्व' को किन्ही नपे तुले शब्दों के परिभाषित कर जाना तथा उसमें समवेत किये जाने वाले विषयों का सीमांकन कर पाना कठिन है, फिर भी अनेक विद्वानों ने इसे अपने अपने दृष्टिकोण से परिभाषित एवं सीमांकित करने का प्रयत्न किया है, उन सबका उल्लेख कर पाना तो कठिन है किन्तु उदाहरणार्थ अमेरिकन नृविज्ञानी ई. वी. टाइलर (tylor) का कहना है – "संस्कृति उस सम्पूर्ण संसृष्टि का वह निदर्शक तत्व है जिसमें ज्ञान, विज्ञानं, विश्वास-आस्था, कला-नैतिकता, विधि-विधान, रीती-रिवाज तथा अन्य सभी कला-कौशल एवं मानवीय व्यवहारों का समावेश होता रहता है, जिन्हें मानव किसी समाज विशेष के सदस्य के रूप में आगृहीत करता है"।

इसी प्रकार ब्रिटिश समाजशास्त्री रॉबर्ट बरस्टेंट (Robert Burstedt) का कहना है,- "संस्कृति वह सर्वसमावेशी समाविष्ट है, जिसमें उन सभी क्रियाकलापों का समावेश होता है जिन्हे हम सोचते एव करते है तथा उन सभी चीजों का जिन्हें हम किसी समाज के सदस्य के रूप में अर्जित करते है (द सोसियल ऑर्डर, तृतीय सं. 1970:123)"।

संस्कृति शब्द की व्याख्या के संदर्भ में भारतीय शास्त्रकारों व विद्वानों का मत है -

1- संस्कृति मानव जीवन का वह उदात्त तत्व है जो उसके जीवन का परिष्कार (refinement) करता है, (संस्कारै: आत्म्धर्मादिभि: जीवन संस्करोति इति संस्कृति)

2- संस्कृति वह है जिसका सम्यक रूप में आत्म कतयाण व मानव कतयाण के लिए उपयोग किया जाता है, (सम्यक प्रकारेण त्रियते यस्या उपयोग: कल्याणाय सा संस्कृति:)

3- संस्कृति वह है जो मानवता के विकृत करने वाले भावों को निरस्त करके उसके स्थान पर जीवनोयोगी भावों वे प्रतिष्ठापित करती है। (अथवा सम्यक प्रकारेण विरोधि भावन अपास्य सम्भावन जीवनोप्रयोगिन: करोति इति संस्कृति)

संदर्भ ग्रंथ :

१. प्रो. डी. डी. शर्मा - उत्तराखण्ड का लोकजीवन एवं लोक संस्कृति

२. डॉ. ह. के. कड़वे –हिन्दी उपन्यासों में आँचलिकता की प्रवृत्त - पृ.सं. ३०१

३. डॉ. विजय कुमार यादव - किसान जीवन विविध आयाम (आँचलिक उपन्यासों के परिपेक्ष्य में) – पृ.सं.५९

४. रामपत यादव – उपन्यास का आँचलिक वातायन – पृ.सं. ६२-६३

५. प्रकाश बाजपेयी – भूमिका - हिन्दी के आँचलिक उपन्यास – पृ.सं. २

६. डॉ. ज्ञानचन्द गुप्त - हिन्दी के आँचलिक उपन्यास अनुभव और दृष्टि – पृ.सं. २

७. डॉ. आदर्श सक्सेना – हिन्दी के आँचलिक उपन्यास और उनकी शिल्पविधि – पृ.सं.२७

८. अंजलि तिवारी - फणिश्वर नाथ रेणु का साहित्य – पृ.सं. १४

९. राम दत्त मिश्र – जल टूटता हुआ – पृ.सं. ३४४

१०. डॉ. रामदरय मिश्र – हिन्दी उपन्यास एक अन्तयात्रा – पृ.सं.१८८

****